अनागत शक्ति : अहिल्याबाई होल्कर

(अनागत खण्डकाव्य)

डॉ. अजय प्रसून

अनागत शक्ति :
अहिल्याबाई होल्कर

(अनागत खण्डकाव्य)

डॉ. अजय प्रसून

≈ प्रकाशक ≈

आकल्प प्रकाशन

लखनऊ

ISBN : 978-81-981298-6-4

अनागत शक्ति : अहिल्याबाई होल्कर
(अनागत खण्डकाव्य)

रचनाकार : **डॉ. अजय प्रसून**
538/द्वितीय/318, योगीनगर, त्रिवेणीनगर तृतीय
सीतापुर रोड, लखनऊ-226020 (उ.प्र.)
मो.: 9305107455

सर्वाधिकार © : रचनाकार के अधीन

संस्करण : प्रथम, 2025 ई.

मूल्य : ₹ 150.00

प्रकाशक : **आकल्प प्रकाशन**
615/128, प्रीती नगर, निकट अन्ना मार्केट
सीतापुर रोड, लखनऊ-226020 (उ.प्र.)
मो.: 9839746476, sst301267@gmail.com
E-mail : aakalpprakashan@gmail.com

आवरण : गूगल से साभार

टाइपसेटिंग : सदाशिव तिवारी # 9839746476

मुद्रक : एन.ए. इन्टरप्राइजेज, 125ए, नया गांव ईस्ट,
लाटूश रोड, लखनऊ-226018 (उ.प्र.)

ANAGAT SHAKTI : AHILYABAI HOLKAR (Anagat Khandkavya)
by Dr. Ajay Prasoon

अनुक्रमणिका

- भूमिका/डॉ. गोपालकृष्ण शर्मा 'मृदुल' 4
- अपनी बात/डॉ. अजय प्रसून 8
- प्रथम सर्ग 10
- द्वितीय सर्ग 17
- तृतीय सर्ग 22
- चतुर्थ सर्ग 29
- पंचम सर्ग 40
- षष्टम सर्ग 45
- सप्तम सर्ग 51
- अष्टम सर्ग 57
- नवम सर्ग 62
- दशम सर्ग 68
- एकादश सर्ग 74

भूमिका

हिंदी साहित्य में अनागत कविता के प्रवर्तक वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. अजय प्रसून विगत पाँच दशकों से साहित्य-साधना कर रहे हैं। उन्होंने गीत, ग़ज़ल, दोहा, मुक्तक आदि विभिन्न काव्य-प्रारूपों में श्रेष्ठ काव्य का सृजन कर ख्याति अर्जित की है। उन्होंने खण्डकाव्यों की भी रचना की है। उनका 'युग के आँसू' खण्डकाव्य काफी समय पूर्व ही प्रकाशित हुआ था। उनके एक अन्य खण्डकाव्य 'अनागत शक्ति : अहिल्याबाई होल्कर' की पाण्डुलिपि पर मुझे अपने विचार व्यक्त करने का सुअवसर प्राप्त हुआ है, जिसे मैं अपना सौभाग्य मानता हूँ।

इन्दौर राज्य की महान रानी अहिल्याबाई विराट व्यक्तित्व की धनी थीं। उनकी गणना भारतीय इतिहास की महानतम नारियों में होती है। शासक के रूप में उनकी न्यायप्रियता, प्रजा वत्सलता, शौर्य और संस्कृति के प्रति अटूट निष्ठा को आदर्श के रूप में स्मरण किया जाता है। उनके लोक कल्याणकारी कार्यों के लिए उन्हें 'पुण्यश्लोक' उपाधि से अलंकृत किया गया है। उनके समय में इन्दौर राज्य के प्रजाजन उन्हें रानी माँ कह कर संबोधित करते थे। वर्तमान में उस क्षेत्र के लोग 'देवी' के रूप में उनका स्मरण करते हैं। भारतीय इतिहास में महारानी अहिल्याबाई का नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित है।

राष्ट्र के प्रति निष्ठावान, धर्म के प्रति गहरी आस्था रखने वाले और मानवता के प्रखर पक्षधर वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. अजय प्रसून जी का ऐसी गरिमामयी भारतीय नारी के व्यक्तित्व और कृतित्व से प्रभावित होकर उन पर खण्डकाव्य की रचना करना स्वाभावित तो है ही, सोद्देश्य भी है। क्योंकि ऐसे महान लोगों की कर्म-साधना युगों-युगों तक आने वाली पीढ़ियों को प्रेरित करती है। और सत्साहित्य वही है जो आम आदमी के मन में उच्च मानवीय मूल्यों को जागृत करे। डॉ. अजय प्रसून जी के अनागत कविता आन्दोलन का ध्येय 'कठिन वर्तमान को जीते हुए स्वर्णिम भविष्य की कल्पना' है। महारानी अहिल्याबाई का सम्पूर्ण जीवन कठिन

संघर्ष करते हुए, पहाड़ से भी बड़े दुःख सहते हुए बीता किन्तु वह बिना रुके, बिना थके अपनी प्राणप्रिय प्रजा का भविष्य सँवारने में जुटी रहीं। इसीलिए डॉ. प्रसून ने उन्हें 'अनागत शक्ति' कह कर यह कृति उन्हें ही समर्पित की है।

'अनागत शक्ति : अहिल्याबाई होल्कर' खण्डकाव्य 11 सर्गों में विभक्त है। प्रथम सर्ग में महारानी अहिल्याबाई की महिमा का वर्णन हुआ है। द्वितीय सर्ग में बाजीराव पेशवा के सेनापति मल्हार राव द्वारा नन्दलाल के सहयोग से मालवा के क्रूर सूबेदार दया बहादुर के वध का वर्णन हुआ है। तृतीय सर्ग में अहिल्याबाई के जन्म, उनकी शिक्षा तथा 9-10 वर्ष की आयु में मल्हार राव के ज्येष्ठ पुत्र खण्डेराव से विवाह का वर्णन है। अकर्मण्यता से घिरे उनके पति पर रानी अहिल्याबाई के सेवाभाव का गहरा प्रभाव पड़ा और इससे उनकी जीवन धारा ही बदल गई। प्रसून जी के शब्दों में:

सास ससुर की सेवा फिर पति की सेवा भी करती थीं।
उनके अंतर को निर्मल कर किरन समान निखरती थीं।।
उनकी इस अप्रतिम सेवा का पति पर गहरा असर हुआ।
उनमें भी परिवर्तन आया, अकर्मण्यता हुई धुआँ।।

इसके साथ ही पुत्र मालेराव और पुत्री मुक्ता के जन्म की चर्चा है।

चतुर्थ सर्ग में अहिल्याबाई के पति खण्डेराव का अजमेर में युद्ध करते हुए वीरगति प्राप्त करने का वर्णन है। रानी पति के साथ सती होना चाहती थीं किन्तु ससुर तथा अन्य स्वजनों के आग्रह पर सती होने का विचार त्याग दिया और संकल्प लिया-

अब साथ निभाऊँगी अपनी जनता का अपने स्वजनों का।
अब केवल गायन करना है, बस राष्ट्र भक्ति के भजनों का।।
अब यह जीवन-धन सचमुच ही, इस धरती पर बिखरा दूँगी।
बस याद रखूँगी भारत को, बाकी सब कुछ बिसरा दूँगी।।

पंचम सर्ग में रानी अहिल्याबाई का राजधर्म का निर्वाह करते हुए जन-सेवा, दस्यु उन्मूलन, वेश्याओं का उद्धार, दीन-दुखी लोगों को सहारा

देने आदि का वर्णन है। साथ ही, ससुर मल्हार राव की मृत्यु का वर्णन भी हुआ है।

षष्टम सर्ग में अहिल्याबाई के पुत्र मालेराव के शासक बनने और अल्पायु में ही उनकी मृत्यु हो जाने की दुखद कथा वर्णित है। सप्तम सर्ग में रानी के सिंहासनारूढ़ होने और वीर योद्धा यशवन्त राव, जिसने दस्युओं का संहार किया था, से बेटी मुक्ता के विवाह की कथा का वर्णन हुआ है। अष्टम सर्ग में रानी अहिल्याबाई के सुशासन का सुन्दर चित्रण हुआ है-

है शासन होता इसीलिए, वह प्रजाजनों के हित में हो।
है दोनों का सम्बन्ध वही, जैसे माँ का बेटे से हो।।
बस इसी बात को लक्ष्य मान, वह निज शासन थी चला रहीं।
जो काम ईश ने सौंपा था, उसमें जीवन को गला रहीं।।

नवम सर्ग में रानी की राजनीतिक सूझ-बूझ, शौर्य और सुशासन का वर्णन हुआ है। प्राचीन मन्दिरों का जीर्णोद्धार, कवियों-कलाकारों का सम्मान आदि उनके सुकृत्यों की कवि ने मुक्त कण्ठ से सराहना की है-

श्रीवृद्धि कला की हो हर पल, इस हेतु उसे दे प्रोत्साहन।
बनवाये मन्दिर, घाट, कुंए, प्रासाद, ताल अति मनभावन।।

दशम सर्ग में डॉ. प्रसून जी ने रानी अहिल्याबाई के जीवन में आये दारुण दुखों का वर्णन किया है। ससुर, पति, दौहित्र, फिर दामाद की मृत्यु और पुत्री मुक्ता के सती हो जाने जैसी दुखद घटनाओं को सहते हुए भी रानी अहिल्याबाई कर्तव्य-पथ पर अडिग रहीं।

एकादश सर्ग में डॉ. अजय प्रसून ने वर्तमान समय में समाज में व्याप्त हो रही विकृतियों का वर्णन करते हुए रानी अहिल्याबाई की गौरवपूर्ण गाथा और उनके सुशासन से तुलना करके इस खण्डकाव्य को प्रासंगिक बना दिया है। वह कहते हैं-

आज जबकि हर एक व्यक्ति अपने स्वार्थों में डूबा है।
कहीं न आशा शेष कोई है, जीवन से ही ऊबा है।।
माँ-बेटे के बीच लकीरें, भ्राता-भगिनी तने-तने।
बोझिल बोझिल जीवन सबका, पल पल तोड़ें दम सपने।।

है समाज अस्तित्वहीन, पग के नीचे है भूमि नहीं।
अन्तस् में कितने स्वार्थ भरे, मिलते मानव अब नहीं कहीं।।

और इसीलिये डॉ. प्रसून आह्वान करते हैं-

अरे अनागत शक्ति स्वरूपा, देवि अहिल्या फिर आओ।
भारत माता की सांसों में, अमृत स्नेह का बरसाओ।।

यह आह्वान प्रकारान्तर से आज के स्वार्थी और धूर्त राजनीतिज्ञों की अत्यन्त क्षीण राष्ट्र-भक्ति को रेखांकित करते हुए, देशभक्ति और मानवीय सरोकारों से परिपूर्ण नेतृत्व की कामना भी करता है जो हमारे समय की सबसे जरूरी माँग है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अनागत कविता आन्दोलन के ध्वजवाहक डॉ. अजय प्रसून ने श्रद्धेय रानी अहिल्याबाई के प्रेरक चरित्र का चित्रण बहुत मनोयोग से इस खण्डकाव्य में किया है। सीधी-सरल-साहित्यिक भाषा में महान ऐतिहासिक नायिका का सम्पूर्ण व्यक्तित्व और कृतित्व दर्पण की भाँति काव्य की चाशनी में पाग कर प्रस्तुत कर दिया है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह खण्डकाव्य काव्यानुरागियों की व्यापक प्रशंसा अर्जित करेगा और कविवर डॉ. अजय प्रसून की कीर्ति का सुदृढ़ स्तम्भ सिद्ध होगा। डॉ. अजय प्रसून जी के प्रति यही मेरी शुभकामना भी है।

डॉ. गोपालकृष्ण शर्मा 'मृदुल'
(साहित्य भूषण)
संपादकः 'चेतना स्रोत' पत्रिका
569क/108/2, स्नेहनगर,
आलमबाग, लखनऊ-226005

मकर संक्रान्ति
दिनांक 14.01.2025
मो.: 9956846197

अपनी बात

लोकमाता अहिल्याबाई का सम्पूर्ण जीवन सत्य की राह पर चलने वाली एक सात्विक नारी का जीवन रहा है। उन्होंने अपने जीवन को एक तपस्या मानकर जनमानस के लिए अपने आपको इस प्रकार समर्पित कर दिया जिसका उदाहरण न अतीत में मिलेगा और न ही भविष्य में मिल पायेगा। उन्होंने माटी का तिलक करके आसमान को छूने का गौरव प्राप्त किया। जिस निष्ठा और लगन से उन्होंने जन सेवा की, अपने दुःख को अपनी सांसों में छिपाकर, स्वयं अपने आंसुओं का पान कर जन-जन के आंसू पोंछे वह अपने आप में अद्वितीय है। एक साधारण कुल में जन्म लेकर सत्ताधीश बन जाना कोई साधारण कार्य नहीं है लेकिन उन्होंने इस कार्य को इतनी योग्यता और निपुणता से सम्पन्न किया कि देखकर दांतों तले उंगली दबाना पड़ सकता है।

पति, श्वसुर, पुत्र-पुत्री एवं दामाद के वियोग को झेलते हुए जनमानस के प्रति इतना त्याग अन्यत्र दुर्लभ ही है। जिस प्रकार भगवान शंकर ने गरल पान कर देवताओं के एवं विश्व के अस्तित्व की रक्षा की थी, उसी प्रकार लोकमाता अहिल्याबाई ने अपने समस्त दुःख रूपी गरल को पीकर अपनी प्यारी जनता को जीवन दान दिया। जिस युग में लोग एक दूसरे के रक्त के प्यासे थे, स्वार्थ ही जिनके जीवन का उद्देश्य था, दूसरे के हित को दबा लेना ही जिनके जीवन का लक्ष्य था, उस युग में उन्होंने प्रेम, सत्य एवं स्नेह की जो जान्हवी जगत में बहाई उसकी तुलना किसी से नहीं की जा सकती।

माता अहिल्याबाई के ऐसे स्वर्णिम जीवन से प्रेरित होकर मैंने माता अहिल्याबाई के पूर्ण जीवन का स्मरण करते हुए इस खण्डकाव्य का सृजन किया है। एक विनीत श्रद्धांजलि के रूप में यह खण्डकाव्य उस महान आत्मा को समर्पित है जिसने मानवता को जीवन देने के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन ही मानवता को समर्पित कर दिया। माता अहिल्याबाई

जितनी प्रासंगिक अपने समय में थीं, उतनी ही प्रासंगिक वह आज भी हैं और आने वाले समय में भी रहेंगी। यह निश्चित है आने वाली पीढ़ियां उनके जीवन से प्रेरणा प्राप्त करती रहेंगी और अगली पीढ़ियों को उनके कृतित्व एवं व्यक्तित्व के बारे में बताती रहेंगी।

मैंने सन् 1980 में हिन्दी साहित्य के सम्मुख अनागत कविता आन्दोलन की प्रस्तावना रखी थी जिसका उद्देश्य कठिन वर्तमान जीते हुए स्वर्णिम भविष्य की कल्पना है। मैंने पाया, लोकमाता अहिल्याबाई का सम्पूर्ण जीवन अनागत के लिए ही समर्पित था। अतः यह अनागत खण्डकाव्य 'अनागत शक्ति अहिल्याबाई होल्कर' लोकमाता अहिल्याबाई को समर्पित करता हूँ। मेरी हार्दिक इच्छा है कि माँ अहिल्याबाई को समर्पित इस कृति को आप सुधी पाठकों का आशीर्वाद प्राप्त हो, साथ ही भूमिका लेखन हेतु वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. गोपाल कृष्ण शर्मा 'मृदुल' जी का आभार व्यक्त करता हूँ।

जय अनागत, जय माँ सरस्वती।

आपका

डॉ. अजय प्रसून

अध्यक्ष/संस्थापक, अखिल भारतीय अनागत
साहित्य संस्थान, माँ वैभवलक्ष्मी होम्यो क्लीनिक,
538/द्वितीय/318, योगीनगर, त्रिवेणी नगर तृतीय,
सीतापुर रोड, लखनऊ-226020

महाशिवरात्रि
दिनांक 26.02.2025
मो.: 9305107455

प्रथम सर्ग

धन्य धन्य हे मातु अहिल्या,
भरत भूमि को धन्य किया।
धूलि कणों को पुण्य बनाया,
निज जीवन बलिदान किया।

जहाँ अहिल्या बाई जन्मीं,
कीर्तिवान वह धरती है।
अब भी जो इस भरत भूमि में,
पावनता सी भरती है।

अब भी जो भारत माता के,
मुखड़े का प्रतिरूप है।
जिसकी महिमा अब भी,
किरणों वाली उजली धूप है।

अब भी जो हर भारतवासी,
की श्रद्धा की पात्र है।
माँ दुर्गा सी पूजी जाती,
नहीं वो नारी मात्र है।

खुले हृदय से जिसके यश की,
गाथा गाता देश है।
वही नारियों में रत्नों सम,
जिसका तेज विशेष है।

जो परहित के लिए हमेशा,
जीती रही व्यथाओं में।
मरकर भी वह अमर हो गयी,
साथी दसों दिशाओं में।

जिसकी देशी और विदेशी,
लोग बड़ाई करते थे।
जिसके चरणों में श्रद्धा के,
पुष्प गुणी जन धरते थे।

जो देती थीं दान हमेशा,
याचक और पुजारी को।
जिसने सम्मानित करवाया,
जग में अबला नारी को।

जिसने कंचन और रजत का,
खुले हस्त से दान किया,
सबको ही अमृत पिलवा कर,
स्वयं हलाहल क्रूर पिया।

दीनों, दुखियों की सेवा कर,
जिसने दलितों को माना।
जो भी आया शरणागत हो,
उसको ही अपना जाना।

गंगा-यमुना सी नदियों का,
जग में जो स्थान है।
वही नारियों बीच अहिल्या,
माता का सम्मान है।

मन्दिर और धर्मशालाओं,
का जिसने निर्माण किया।
जिसने भारतीय जन मानस,
को नवीनतम ज्ञान दिया।

जो मध्यम कुल में जन्मी,
प्रतिकूल परिस्थिति पाकर भी।
अपनी आत्म शक्ति के द्वारा,
पाया पुण्य प्रभाकर भी।

स्वाध्याय के द्वारा जिसने,
चेतनता को जीता था।
जिसके जीवन का क्षण-प्रतिक्षण
बस दुःख में ही बीता था।

लेकिन अपने कर्म योग से,
जन-जन का दुःख दूर किया।
दुर्बल को दी शरण और,
सबलों के बल को चूर किया।

देवि अहिल्या बाई होल्कर,
जन-मन की अभिलाषा थीं।
मृत समाज के लिये संजीवनि,
से परिपूरित आशा थीं।

प्रेम भक्ति के बल पर जिसने,
विजित किया सारे जग को।
धर्म भावना का प्रसार कर,
किया प्रशस्त राष्ट्र मग को।

कितने शिलालेख लगवाये,
घाटों का उद्धार किया।
झीलों - तालाबों - नहरों से,
जन-जन का उपकार किया।

उज्जयिनी, ऋषिकेश, अयोध्या,
काशी, चौड़ी, नैमिष में।
कितने धर्मस्थल रचवाये,
निज के प्राण भरे जिसमें।

अम्बा गाँव अमर कण्टक में,
आलमपुर कर्नाटक में।
चित्रकूट में, गंगोत्री में,
खूब लुटायी थी रकमें।

जगन्नाथ जी पुरी द्वारिका,
दारुक वन में, पुष्कर में।
बद्री नारायण प्रयाग में,
किये सृजन भर अंतर में।

ऐसी नारी जो कि नारियों,
बीच रही अद्वितीय सदा।
आती है सचमुच ही जग में,
ऐसी नारी यदा-कदा।

जो स्थान विश्व में सीता-
सावित्री का, मीरा का।
वही अहिल्या बाई होल्कर,
जैसी बुद्धि प्रवीरा का।

बनी लोकमाता सबकी ही,
हर प्राणी में स्नेह भरा।
प्यासी धरती की साँसों में,
जिसने मीठा मेह भरा।

उसके चरणों में सिर नत है,
जीवन उस पर अर्पित है।
उसकी ही जीवन गाथा को,
यह लघु काव्य समर्पित है।

द्वितीय सर्ग

समय-सूर्य चलता रहता है,
कभी नहीं वो रुकता है।
चाहे शासक या कि दीन हो,
सम्मुख कभी न झुकता है।

शाह मुहम्मद शाह मुगल,
सत्ता के दुर्बल शासक थे।
प्रजाजनों के मध्य स्वयं वह,
वैभव सुख संवाहक थे।

उनमें क्षमता शेष नहीं थी,
दीनों की रक्षा करते।
कष्ट भोगती हुई प्रजा के,
प्राणों में अमृत भरते।

दया बहादुर उन्हीं दिनों था,
सूबेदार मालवे का।
लोगों को अगणित दुख देने,
का ले रक्खा था ठेका।

सारी प्रजा हुई उत्पीड़ित,
क्रूर प्रबलतम सत्ता में।
सुबहें सबकी दुःख में डूबीं,
आँसू में डूबीं शामें।

नन्दलाल जी राव उन दिनों,
प्रमुख वहाँ अधिकारी थे।
वीर पुरुष थे धर्म आत्मा,
से जन-जन हितकारी थे।

नदी नर्मदा के घाटों की,
देख-रेख वे करते थे।
फसलों की लगान लेकर,
जन सेवा में पग धरते थे।

नन्दलाल जी, दया बहादुर का,
व्यवहार न सह पाये।
कुंठित दुष्ट बुद्धि के सम्मुख,
मगर न कुछ भी कह पाये।

नन्दलाल ने मुगल शाह से,
कहा कि जन के कष्ट हरें।
किन्तु शाह था दुर्बल शासक,
कैसे आत्म शक्ति उभरे।

नन्दलाल जी, बादशाह को,
सालाना कर देते थे।
कर लेकर भी जनता की,
हित नौका कभी न खेते थे।

ऐसी स्थिति देख उन्होंने,
सालाना कर बन्द किया।
कैसे भी हो जनता का हित,
मन में अन्तर्द्वन्द्व किया।

अप्रतिम बाजीराव पेशवा,
हिन्दू हित के रक्षक थे।
कोमल भावनाओं के पोषक,
दुष्ट नीति के भक्षक थे।

नन्दलाल ने वीर पेशवा को,
अंतर से पत्र लिखा।
लिखा कि जनता बहुत विकल है,
वही लिखा है जो कि दिखा।

आप चढ़ाई करें मालवा-
पर, सहयोग पूर्ण दूँगा।
मात्र आपके लिए नर्मदा,
के द्वारों को खोलूँगा।

वीर पेशवा खोज रहे थे,
पहले से ऐसा अवसर।
सेनापति मल्हार राव जी,
होल्कर को भेजा तत्पर।

सैनिक ले बारह हजार तक,
आँधी से आये होल्कर।
भैरू घाट मार्ग से उनको,
लाये नन्दलाल जाकर।

दया बहादुर ने जब पाया,
समाचार यह अति भीषण।
नन्दलाल ने कहा कि मत दो,
साथ पेशवा का इस क्षण।

किन्तु न मानी नन्दलाल ने,
बात एक भी नर पशु की।
एक न चल पाइ दुर्मुख की,
फौज रोकने से न रुकी।

बारह अक्टूबर सत्रह सौ,
इकतिस को वह मरा वहीं।
जीते होल्कर राव किन्तु,
चर्चा न दया की हुई कहीं।

होल्कर जी ने नन्दलाल को,
समुचित पद-सम्मान दिया।
उनके अधिकारों को माना,
उनका मन से मान किया।

तृतीय सर्ग

है चौड़ी नामक ग्राम वहाँ,
निर्मित औरंगाबाद जहाँ।
सत्रह सौ पच्चीस में जन्मी,
वीर अहिल्या बाई वहाँ।

पिता मानको जी शिन्दे थे,
उनके सज्जन वीर बड़े।
घर गृहस्थ वाले थे फिर भी,
परिपाटी से खूब लड़े।

यह ऐसा था समय कि जब,
लड़कियाँ न पढ़-लिख सकती थीं।
अपने हित के लिये न हरगिज,
एक शिखर चढ़ सकती थीं।

किन्तु मानको जी शिन्दे ने,
देवि अहिल्या को जाना।
उनको समुचित शिक्षा देना,
ही अपनी गरिमा माना।

अगर न हम अपने शिशुओं को,
समुचित शिक्षा-दीक्षा दें।
तो क्या उनको जीवन में हम,
मात्र माँगने भिक्षा दें।

बच्चों में जो क्षमतायें हैं,
उनका आविष्कार करें।
उनकी योग्यताओं को जानें,
उनकी जय-जयकार करें।

यही सोचकर शिन्दे जी ने,
देवि अहिल्या को पाला।
उनकी अन्तरात्मा में जी,
भर शिक्षा का धन डाला।

इसीलिए तो मातु अहिल्या,
बचपन से ही गुणी बनी।
अपने जीवन को महका कर,
बनी स्वयं जग की जननी।

देवि अहिल्या जब कि मात्र,
नौ-दस वर्षीय कुमारी थीं।
खण्डेराव होल्कर के गृह,
बन कर वधू पधारी थीं।

खण्डेराव होल्कर थे,
मल्हार राव के पुत्र प्रथम।
सारी सुविधायें पाकर भी,
रहे जिन्दगी में अक्षम।

खण्डेराव तीन माताओं,
की मधु-ममता पाते थे।
हठी, चिड़चिड़े झगड़ालू थे,
अंतर द्वेष बढ़ाते थे।

शासन-सूत्र चलाना उनके,
बस का काम न हरगिज था।
उनके कृत्यों से जन मानस,
आतंकित था, आजिज था।

यही सोच मल्हार राव ने,
उनका परिणय रचा दिया।
सन् सत्रह सौ पैंतिस में ही,
यह शुभ कार्य पुनीत किया।

देवि अहिल्या सास ससुर को,
माता पिता समझती थीं।
बड़े सबेरे उठ पूजन कर,
गृह-कार्यों में लगती थीं।

सास-ससुर की सेवा फिर,
पति की सेवा भी करती थीं।
उनके अंतर को निर्मल कर,
किरन समान निखरती थीं।

वह सुयोग्य पत्नी थीं, बहू थीं,
सुघर भाव की नारी थीं।
अपने कर्तव्यों से बेशक,
वह तो कभी न हारी थीं।

देवि अहिल्या मातु पिता सम,
सास-ससुर की सेवा कर।
बड़े सबेरे उठ पूजन कर,
करतीं गृह के कार्य प्रखर।

उनकी इस अप्रतिम सेवा का,
पति पर गहरा असर हुआ।
उनमें भी परिवर्तन आया,
अकर्मण्यता हुई धुआँ।

द्वेष, चिड़चिड़ापन, झगड़ालू-
पन अंतर से दूर हुए।
हृदय बड़ा निर्मल हो बैठा,
सपने सब सिन्दूर हुए।

अब वह अपने राज-काज-
में भी गहरी रुचि लेते थे।
साथ अहिल्सा सी अर्द्धांगिनि,
का जो प्यार समेटे थे।

ऐसा काम न करती थीं वे,
पति को जो कि न भाता हो।
ऐसा कैसे भला न हो जब,
जनम-जनम का नाता हो।

इसीलिये खुद के सपनों में,
वह भी खोयी रहती थीं।
पति की प्रीति जान्हवी में,
पल-पल लहरों सी बहती थीं।

खण्डेराव सरीखे मुक्त-
विचारों वाले पति पर भी।
पड़ा प्रभाव सभी पर उनका,
घर में उनके ऊपर भी।

खण्डेराव शस्त्र विद्या में,
भी हो गये निपुण काफी।
अपराधी को दण्ड निरपराधी,
को देते थे माफी।

इसी तरह से पति-पत्नी में,
सामंजस्य हुआ भारी।
कहीं न कोई दुःख-दुविधा थी,
कहीं न कोई लाचारी।

जन्मा माले राव पुत्र,
सन सत्रह सौ पैंतालिस में।
तीन वर्ष के बाद हुई कन्या,
'मुक्ता' अड़तालिस में।

देवि अहिल्या की बस ये,
दो ही सन्तानें जन्मी थीं।
बावजूद इसके वह सारे,
जग की ही तो जननी थीं।

चतुर्थ सर्ग

जब मल्हार राव होल्कर ने,
यह देखा तो आभास हुआ।
खण्डेराव युद्ध विद्या में,
दक्ष हुए विश्वास हुआ।

समर-क्षेत्रों में वह उनको,
अपने संग ले जाते थे।
जहाँ-जहाँ भी जाते थे,
वह विजयश्री को पाते थे।

सन् सत्रह सौ चौवन में,
अजमेर गये दोनों मिल के।
चौथ वसूली करने के हित,
निकट जा लगे मंजिल के।

चौथ वसूली देने से पर,
जाटों ने इन्कार किया।
कहा कि देंगे नहीं चौथ हम,
कोई पैसा नहीं दिया।

हुई युद्ध की तुरत घोषणा,
धावा बोल दिया तत्क्षण।
अविजित था कुम्हेर दुर्ग,
पर ठाने बैठे थे वे प्रण।

किसी तरह कुम्हेर दुर्ग को,
आज हस्तगत करना है।
माँ काली के लहू-पान हित,
उनका खप्पर भरना है।

अतुलनीय वह युद्ध हुआ,
जो याद रहेगा दुनिया को।
हुई वीरतापूर्ण लड़ाई,
शीश गिरे कट-कट लाखों।

खण्डेराव बहादुर योद्धा,
शत्रु पक्ष के बीच घिरे।
किसी सिपाही की गोली से,
समर भूमि के बीच गिरे।

सन् सत्रह सौ चौवन के,
चौबीस मार्च के दिन असमय।
वीर प्रवर योद्धा ने तोड़ी,
आखिर अपनी जीवन-लय।

पिता श्री मल्हार राव जी,
भिड़े अलग थे दुश्मन से।
पुत्र-मृत्यु का समाचार सुन,
टूट गये जैसे तन से।

बहने लगीं अश्रु-धारायें,
उनके नयनों से अविरल।
दुखी हो गई सेना सारी,
सबके अंतर हुए विकल।

उठा शान्ति ध्वज हाथों में,
लहराया सेना नायक ने।
सबके ही सीनों को जैसे,
बींधा हो विष-शायक ने।

तब गये वहाँ मल्हार राव,
जिस स्थल पड़ा हुआ शव था।
थी अन्तरात्मा तक अशान्त,
बस पीछे पड़ा पराभव था।

शव देख स्वयं के सुत का ही,
तब हुई मनःस्थिति ऐसी।
जैसे कोई दीवाना हो,
या कि कहो पागल जैसी।

वह मृत बेटे को छाती से,
बारम्बार लगाते थे।
उनके विश्वस्त लोग सारे,
उनको ये ही समझाते थे।

यह जीवन है दुख की सरिता,
सबको ही बह जाना है।
कुछ साथ न ले जायेंगे हम,
बस नाम शेष रह जाना है।

है नाशवान प्राणी जग में,
जो आया उसको मरना है।
उसके हित यह शोक व्यर्थ,
उसके हित दुःख क्या करना है।

रोने या व्याकुल होने से,
जीवित शव न हुआ करता।
समय बड़ा ही निर्मोही वह,
दुःख से मानव कर भरता।

कभी एक दिन हम उसके,
पंजों में जकड़े जायेंगे।
वह छोड़ेगा तुम्हें हमें क्या,
मार्ग मृत्यु का पायेंगे।

इसीलिए तो शोक त्याग,
आगामी पल पर ध्यान धरें।
अब आगे क्या-क्या करना है,
यही सोच कर कार्य करें।

तब शान्त हुए मल्हार राव,
यह समाचार घर भिजवाया।
पायी जब खबर अहिल्या ने,
तो जीवन को सूना पाया।

करती विलाप पहुँचीं शव तक,
हो गयी विकल वह बेचारी।
केवल रोती ही जाती थी,
प्रभु कैसी थी यह लाचारी।

हो लुटा कि जिसका जीवनधन,
वह शान्त कहाँ रह सकती थी।
केवल दुःख के दावानल में,
हँसते-हँसते दह सकती थी।

सोचा उसने हो जाऊँ सती,
अपने प्रियतम के साथ अभी।
एकाकी जीवन को जीना,
हरगिज सम्भव है नहीं कभी।

यह सोच अहिल्या बाई ने,
जाहिर की इच्छा सती बने।
लेकिन न कोई स्वीकार सका,
चुप रह न सके जो थे अपने।

मिलकर सबने यह बात कही,
यह उचित न होगा जल मरना।
मल्हार राव भी बोल उठे,
बेटी न उचित है यह करना।

अब मेरा कोई रहा नहीं,
बस तुम्हीं शेष हो जीवन में।
यह पुत्र छोड़कर चला गया,
अपना न कोई इस निर्जन में।

तुम भी यदि मुझको छोड़ गयी,
तो कैसे भला जियूँगा मैं।
बस जिन्दा ही मर जाऊँगा,
यह अन्तर्गरल पियूँगा मैं।

तब कहा अहिल्या बाई ने,
जब पति ही मुझको छोड़ गये।
इस जीवन के समरांगण में,
कोमल से मन को तोड़ गये।

बर्दाश्त नहीं कर पाऊँगी,
यह पति वियोग इस जीवन में।
कैसे विचरण कर पाऊँगी,
सोचिये भला घर-आँगन में।

है उचित यही करना मुझको,
पति का ही साथ निभाऊँ मैं।
उनके शव संग चिता में ही,
अब जल करके मर जाऊँ मैं।

नयनों में आँसू भर करके,
मल्हार राव थे विकल बड़े।
आँसू ही आँसू बरबस ही,
उनकी पलकों से निकल पड़े।

वह बोले पुत्री बात सुनो,
मैंने पाला पोसा जिसको।
सारी आशाएँ तोड़ गया,
अब मानूँगा अपना किसको।

क्या तुम भी मुझे निराश्रित कर,
पति के ही पथ पर चल दोगी।
अपने इस बूढ़े दीन पिता,
के प्रति न एक पल सोचोगी।

यदि तुम्हें आज जल मरना है,
पहले मुझको मर जाने दो।
इस राज्य-सम्पदा-मर्यादा,
को श्रीहीन कर जाने दो।

जिन्दा मैं तो मृत सदृश हुआ,
ज्यों पेड़ जड़ सहित उखड़ा हो।
वह क्या कर पाये जीवन में,
जिसका यह भीषण दुखड़ा हो।

बस एक सहारा तुम मुझको,
केवल तुम ही दे सकती हो।
मत वज्राघात करो ऐसा,
यह नैया तुम खे सकती हो।

यह कहकर सिसक-सिसक रोये
पाषाण हृदय भी पिघल गये।
कोमल अंतर की नारी के,
आँसू बूँदें बन निकल गये।

वह देवि अहिल्या बाई भी,
यह निश्चय मन में कर बैठी।
अब सती नहीं हो पाऊँगी,
यह प्रण अंतर में भर बैठी।

अब साथ निभाऊँगी अपनी,
जनता का, अपने स्वजनों का।
अब केवल गायन करना है,
बस राष्ट्र भक्ति के भजनों का।

अब यह जीवन-धन सचमुच ही,
इस धरती पर बिखरा दूँगी।
बस याद रखूँगी भारत को,
बाकी सब कुछ बिसरा दूँगी।

पंचम सर्ग

अब देवि अहिल्या बाई ही,
हर राज-काज निपटाती थीं।
जनता की सभी समस्यायें,
वे पल भर में सुलझाती थीं।

जब राजा जी मल्हार राव,
जाते थे यदा-कदा बाहर।
तब राजकर्म सारे ही तो,
आते रानी के काँधों पर।

वह समय-समय पर राजकर्म,
में मदद सभी की करती थीं।
अपनी गरिमा के साथ-साथ,
अंतर से खूब निखरती थीं।

सुव्यवस्था तोपों की करना,
गायों हित चारे-पानी की।
दैनिक कार्यों में शामिल थी,
दुःख-गाथा सुनना प्राणी की।

कर दस्यु वृत्ति का उन्मूलन,
वेश्याओं का उद्धार किया।
निर्बल को दी नव-आशायें,
दुखियों का बेड़ा पार किया।

इस तरह सभी की भावनाओं,
को समुचित मान दिया करतीं।
पति की यादों के संग-संग ही,
वह कर्म नवीन किया करतीं।

यह वह क्षण थे जब युद्धलीन,
मल्हार राव थे गोहद से।
गोहदाधीश का पतन किया,
पर दूर हुए निज सरहद से।

उस पर भी थी वृद्धावस्था,
थे दुर्बल घोर परिश्रम से।
मन स्थितियों वश नर्वस थे,
पर डटे रहे अपने दम से।

थोड़ा विश्राम किया लेकिन,
आलमपुर उनको जाना था।
थे वहाँ कार्य अति-आवश्यक,
उन सबको ही निपटाना था।

उठ गया कान में दर्द प्रखर,
वह बढ़ता गया अचानक ही।
हर एक चिकित्सा व्यर्थ गयी,
स्थितियाँ बनीं भयानक ही।

जब मृत्यु निकट आई उनकी,
तो निकट पौत्र को बुलवाया।
उसको दे अपना नाम कहा,
अब निष्क्रिय है मेरी काया।

श्रीमंत पेशवा की सेवा,
अब मेरे बाद तुम्हीं करना।
तुम मालेराव भले कह लो,
लेकिन तुम नाम मेरा धरना।

फिर तुकोराव को बुलवाकर,
उनके कर सौंपा बालक को।
इस तरह राज्य की रक्षा का,
दे भार दिया शुचि पालक को।

सन् सत्रह सौ छाछठ वाली,
थी बीस मई दुख पूर्ण घड़ी।
उस दिन उनकी जीवन लीला,
की टूट गयी सम्पूर्ण कड़ी।

मल्हार राव की मृत्यु हुई,
तो देवि अहिल्या विचलित थीं।
सब दाह कर्म सम्पन्न किये,
जो प्रथा पुरातन प्रचलित थी।

छतरी बनवाई स्मृति में,
आलमपुर में थी बड़ी भव्य।
उसकी सुव्यवस्था की खातिर,
था खर्च कर दिया बड़ा द्रव्य।

मल्हार राव अपने युग के,
थे एक अनुभवी सेनापति।
उसने ही अपना नाम किया,
जिसने पायी उनकी संगति।

थर-थर उनसे थर्राते थे,
कितने रजवाड़े राजपूत।
बलवानों में थे सर्वश्रेष्ठ,
थे शांति मार्ग के अग्रदूत।

वे युद्ध कला में थे प्रवीण,
वे शासक बड़े यशस्वी थे।
मानव होकर भी मानव के,
ऊपर थे परम तपस्वी थे।

षष्टम सर्ग

मल्हार राव की मृत्यु बाद,
फिर मालेराव बने शासक।
चंचल मन वाले थे लेकिन,
वे उग्र भाव के थे पोषक।

उनका यह भाव खटकता था,
जग मातु अहिल्या बाई को।
वे प्यार प्रजा को करती थीं,
अनुभव करती गहराई को।

वे अपनी जनता के हित में,
सर्वस्व न्योछावर करती थीं।
दुःख भले स्वयं बर्दाश्त करें,
उनकी विपदायें हरती थीं।

वह कहतीं सदा यही सुत से,
तुम बनो यशस्वी कीर्तिवान।
जैसे कि तुम्हारे दादा थे,
सूरज की किरणों के समान।

सार्थक यह जीवन तब होगा,
जब तुम वैसे बन जाओगे।
जब जन-जन की आशाओं को,
पूरा मन से कर पाओगे।

थी मातु अहिल्या बाई की,
यह इच्छा सुत का ही हित हो।
सुख करें उसे परिपूर्ण सदा,
हर आशा उसकी द्विगुणित हो।

पर सत्ता लेते ही उनकी,
कुछ माह बाद बीमार हुए।
पल-पल उनकी स्थिति बिगड़ी,
ढीले सांसों के तार हुए।

हो गया उन्हें था सन्निपात,
बचना उनका नामुमकिन था।
इस पर भी माता को प्रयत्न,
करना अधिकाधिक लेकिन था।

थी ममता दया नहीं इतनी,
यह काल उन्हें दे प्राणदान।
चाहे जितने प्रयत्न कर लो,
यह काया तो है नाशवान।

फिर फाल्गुन कृष्ण द्वादशी को,
इकलौता पुत्र गया माँ का।
सारी गोटें थीं उलट गयीं,
था पड़ा काल का वह पांसा।

फिर सत्ता लोलुप लोगों ने,
दी मातु अहिल्या को सलाह।
वे गोद किसी बच्चे को लें,
चल जायेगा जीवन - प्रवाह।

थीं चतुर अहिल्या बाई भी,
लोगों की चाल समझती थीं।
जो करना था खुद करती थीं,
वह व्यर्थ न कहीं उलझती थीं।

वह अच्छी तरह जानती थीं,
राजा जन को सन्तुष्ट करे।
वह ऐसा कर्म न कर पाये,
तो घोर नर्क के कष्ट भरे।

इस मेरी सत्ता के लोलुप,
कर्तव्य भ्रष्ट जन कैसे हैं।
इन लोगों का मन कलुषित है,
कहने को अपने जैसे हैं।

जो औरों के अधिकार छीन,
वीरत्व बड़ा दर्शाते हैं।
वे पाकर ऐसी सत्ता को,
निर्बल जन को तरसाते हैं।

यदि निर्बल कभी पड़े तो ये,
करते चरणों का चुम्बन भी।
यदि सबल बने तो निर्बल को,
देते नागों का दंशन भी।

ये समझ न पाते हैं इतना,
शेरों के दाँत गिने जाते।
आँधी की गति रोकी जाती,
सूरज अस्ताचल को पाते।

लेकिन दृढ़ निश्चय को ठाने,
उनको न करे विचलित कोई।
यदि ऐसा कोई करता है तो,
समझो जग - आशा सोई।

यह कठिन परीक्षा थी उनकी,
इन्दौर राज्य की नियति यही।
सत्ताधारी रानी ही हो,
थी वर्तमान की प्रगति यही।

मल्हार राव जब शासक थे,
तब भी प्रासंगिक थीं रानी।
उनकी प्रतिभा की किरणों को,
सारी जनता थी पहचानी।

सब उनकी न्याय व्यवस्था से,
थे परिचित भी सन्तुष्ट भी थे।
उनकी निन्दा करने वाले कुछ
स्वार्थी लोलुप दुष्ट भी थे।

इसलिये लोकसेवा के हित,
कर ली सत्ता स्वीकार स्वयं।
निर्मन मन अडिग तपस्वी बन,
आया न कहीं भी तनिक अहम।

सन् सत्रह सौ सड़सठ में वे,
इन्दौर राज्य की शासक बन।
की जन सेवा अविरल गति से,
दुष्टों के हित संहारक बन।

सप्तम सर्ग

जब सत्तासीन हुईं रानी,
तब राज्य बड़ा था अस्त-व्यस्त।
मनमानी थी सब यहाँ-वहाँ,
थी परेशान जनता समस्त।

चोरों से और डाकुओं से,
थे त्रस्त सभी असहाय सभी।
लेकिन सम्बल पा रानी का,
खुश हुए बड़े समुदाय सभी।

रानी माँ ने दरबार किया,
आदेश उचित सबको देकर।
सुव्यवस्थित कर इन्दौर राज्य,
चल पड़ीं अगम जीवन पथ पर।

उस समय सुपुत्री मुक्ता भी,
थी यौवन रेखा लाँघ रही।
उसका विवाह भी करना था,
इच्छा थी मन की शेष यही।

वे कायर जन के जीवन को,
बस बोझ मानकर चलती थीं।
निज स्वाभिमान के ही बल पर,
दुःख सहती और संभलती थीं।

सोचा कि सुपात्र मिले ऐसा,
जो वीर साहसी हो अपार।
जिसकी क्षमता का धरती पर,
उत्तर न मिले वो होनहार।

ऐसा ही कोई वर पुत्री के,
लिए मिले तो बात बने।
ऐसा सुयोग्य यदि मिले कोई,
तो उसका परिणय पर्व मने।

बस यही सोच कर रानी ने,
की उचित घोषणा भर उमंग।
जो कोई राज्य लुटेरों से,
कर सके मुक्त उसके ही संग।

कर परिणय दूँगी मुक्ता का,
उसको दामाद बनाऊँगी।
जो मेरे मन की कर देगा,
उसके सर मौर धराऊँगी।

यह सुन करके घोषणा उठा,
नवयुवक वीर यशवन्त राव।
था उसमें अनुपम जोश भरा,
था नहीं वीरता का अभाव।

यशवन्त राव फणसे बोला,
यदि मिले मुझे धन औ सेना।
यह कार्य करूँ सम्पन्न स्वयं,
कुछ और न मुझको है लेना।

सुन करके खुश दरबार हुआ,
थीं देवि अहिल्या भी प्रसन्न।
उसके मुख पर का तेज देख,
रह गयी समूची सभा सन्न।

धन और सैन्य को पा करके,
वह कार्य उन्होंने कर डाला।
हो गई राज्य में पूर्ण शान्ति,
दुष्टों का जीवन हर डाला।

जब सुनी यशो गाथा उनकी,
महारानी बाई अहिल्या ने।
जितनी उनको मिल पाई खुशी,
उसको ऊपर वाला जाने।

अपने निश्चय की खातिर ही,
मुक्ता का उनसे ब्याह किया।
भोजन कपड़े दक्षिणा बाँट,
काफी दहेज में दान दिया।

जब समय विदा का आया तो,
भर आँसू आये अहिल्या के।
बेटी के कर पकड़े-पकड़े,
बोलीं यशवन्त पास जाके।

यह आज तुम्हारी पत्नी है,
इसका तुम ध्यान सदा रखना।
हो पाये दुखी किंचित न कभी,
इसका अनुमान सदा रखना।

जो करी प्रतिज्ञा परिणय में,
उसको न भूलना सुनो कभी।
मधुमय व्यवहार सदा करना,
मन से ही इसको गुनो कभी।

पति-पत्नी का जीवन ऐसा,
ज्यों दो पहिये हों गाड़ी के।
दोनों का ही सहयोग मिले,
तो काम चले संसारी के।

है यह गृहस्थ का जीवन भी,
गृहिणी के ही सुख पर निर्भर।
यदि वह ही दुखी रहे तो फिर,
आती है बड़ी समस्या घर।

फिर आशीर्वाद दिया अपना,
दामाद को भी पुत्री को भी।
तुम फूलो फलो सदा जग में,
घटनाएँ घटें भले जो भी।

निज पुत्री को निर्देश दिया,
यह पति ही पूज्य तुम्हारे हैं।
इनकी सेवा सुश्रूषा करो,
बस ये ही परम सहारे हैं।

अपने पति से तुम सदा मधुर,
संभाषण नित्य किया करना।
अपने घर देहरी-आँगन में,
सुख की ही पूँजी को भरना।

अब जाओ निज पति के गृह को,
ईश्वर कल्याण करे मन से।
मुझ को भी भूल न जाना तुम,
बस दूर न करना जीवन से।

अष्टम सर्ग

है शासन होता इसीलिए,
वह प्रजा जनों के हित में हो।
है दोनों का सम्बन्ध वही,
जैसे माँ का बेटे से हो।

बस इसी बात को लक्ष्य मान,
वह निज शासन थीं चला रहीं।
जो काम ईश ने सौंपा था,
उसमें जीवन को गला रहीं।

गद्‌दी पर बैठीं तो लगान की,
पद्धति कुछ ऐसी डाली।
सब चौथ राज्य को देते थे,
फैली मनमोहक हरियाली।

फिर किये राज्य के तीन भाग,
उत्तरी-मध्य-दक्षिणी क्षेत्र।
सबकी उन्नति के लिये सदा,
रानी ने खोले सुघर नेत्र।

इन्दौर-तराना आदि भूमि,
उत्तरी भाग की सम्पति थी।
था मध्य महेश्वर का सुभाग,
दक्षिण सतपुड़ा भरी गति थी।

वे राजकोष की देखभाल,
अपने बलबूते करती थीं।
वह पंथ हरा हो जाता था,
जिस पथ पर वे पग धरती थीं।

उन्नति होती है राज्यों की,
जब कृषि का क्षेत्र प्रखरतम हो।
वाणिज्यिक क्षेत्र सुधार भरा,
सब खुश हों मन में संयम हो।

उनके शासन में व्यापारी थे,
सुखी और सम्पन्न बड़े।
उनकी सत्ता के माथे पर,
हीरे मोती औ रत्न जड़े।

थे राव तुको जी घर के ही,
मल्हार राव के कुल के थे।
वे परम साहसी तेजवान,
रहते सबसे मिल-जुल के थे।

वे मातु अहिल्या बाई को,
सम्बोधन 'मातु श्री' देते।
यद्यपि उनसे थे बड़े किन्तु,
उद्‍बोधन में सुख पा लेते।

माता भी उनको पुत्र तुल्य थीं,
रहीं मानती सदा-सदा।
उनके काँधों पर सेनापति के,
जैसा गुरुतर भार लदा।

वे सच्चे राजभक्त बनकर,
सच्ची जनसेवा करते थे।
वे कर वसूल कर लाते थे,
और राजकोष को भरते थे।

थी पास अहिल्याबाई के,
सेना सशक्ततम - तेज पुंज।
पलटन थी एक नारियों की,
लगती तेजोमय शक्ति कुंज।

उपलब्ध बहुत थे न्यायालय,
पंचायत द्वारा गाँवों में।
होता झगड़ों का निपटारा,
बूढ़े वृक्षों की छाँवों में।

शासन में देवि अहिल्या ने,
विधवाओं पर भी ध्यान दिया।
उनकी सम्पति की रक्षा की,
उनको समुचित सम्मान दिया।

कुछ भीलों ने मिल एक बार,
कर दी शासन में उथल-पुथल।
पर उन पर भी उस देवी ने,
डाला करुणा का मृदु आँचल।

कर दिया सभी को क्षमा और,
अपना मुरीद भी मनवाया।
जिससे जो कार्य निकल पाया,
वह कार्य उसी से करवाया।

इस तरह हुआ निर्भय जीवन,
जनजीवन भी अति शान्त हुआ।
सीधे जन को सुविधायें दीं,
दुष्टों का मुखड़ा क्लान्त हुआ।

नवम सर्ग

हर राजा का सुख निहित सदा,
रहता है जनता के सुख में।
जनता का सुख भी निहित सदा,
रहता है राजा के रुख में।

रानी हिन्दू-मुस्लिम दोनों-
को, एक समान मानती थीं।
उनके धर्मों को मान सहित,
निरपेक्ष महान मानती थीं।

रानी ने अपने दूत रखे,
पूना में श्रीरंग पट्टम में।
लखनऊ-हैदराबाद आदि में,
नागपूर के दम-खम में।

वे पता सदा करती रहतीं,
किस जगह कहाँ क्या काम हुआ।
किस जगह शांति साम्राज्य सजा,
किस जगह विकट संग्राम हुआ।

माता ने अपनी पूर्ण शक्ति,
बस शान्ति-कार्यों में व्यय की।
उनका जो कर्म विधान रहा,
उसमें न बात थी संशय की।

लेकिन अशांति जिसने भी की,
उनसे वह दुर्गा सदृश लड़ीं।
कम युद्ध किये माँ ने लेकिन,
कमजोर हृदय से नहीं पड़ीं।

वह थीं स्वभाव की अति विनम्र,
मन शांत और मस्तिष्क शांत।
उनके अंतर की गहराई पर,
शीश झुकाता था प्रशान्त।

उनका जनता पर नहीं अपितु,
शासन था जनता के मन पर।
वह सदा चेतनाशील रहीं,
दुख में भी सुख का अनुभव कर।

मानव जीवन गुणवान बने,
इसलिये कला आवश्यक है।
साहित्य बिना जीवन सूना,
दोनों का साथ अन्त तक है।

जिस समय अहिल्या बाई की,
थी सत्ता वह था विकट समय।
सम्पूर्ण राष्ट्र था अस्त-व्यस्त,
टूटी थी ज्यों सांसों की लय।

अपने अधिकार स्वार्थवश हो,
हर शासक बना निरंकुश था।
अपने कर्मों से ग्लानि कहाँ,
अपनी ही करनी में खुश था।

थी होड़ लगी षड़यंत्रों की,
हर धर्म स्वार्थ का साधक था।
था मूल्य न मानव का कोई,
वह मानवता में बाधक था।

श्रीवृद्धि कला की हो हर पल,
इस हेतु उसे दे प्रोत्साहन।
बनवाये मन्दिर घाट कुंयें,
प्रासाद-ताल अति मनभावन।

इस भरत भूमि की धरती पर,
बिखरा है उनका कला प्रेम।
वह कलाकार को मान सहित,
बुलवाती थीं कह कुशल क्षेम।

फिर होती जिसमें जो क्षमता,
वैसा ही कार्य कराती थीं।
जो अवलोकन करने वाले,
के अंतर बीच समाती थीं।

वह विद्वानों का यथा योग्य,
सत्कार नित्य ही करती थीं।
कवि मोरोपंत सरीखों की,
झोली खुशियों से भरती थीं।

धोलप-अनन्त फन्दी गायक,
जन्मा था कुल में ब्राह्मण के।
वह खेल-तमाशे करता था,
मन मोहक मन-आकर्षण के।

उससे मिल कर बोलीं रानी,
तुम ब्राह्मण कुल में जन्मे हो।
इसलिये ईश की भक्ति करो,
चेतनता के आँगन में हो।

जिसका कण-कण परमाणु बने,
घनघोर तिमिर का नाश करे।
उस परम पिता के चरणों की,
ले धूलि तुम्हारा स्वर उभरे।

सुनकर अनन्त फन्दी गायक,
ने खेल-तमाशा छोड़ दिया।
लग गया ईश-आराधन में,
अपने जीवन को मोड़ दिया।

इस तरह कला-साहित्य क्षेत्र,
की उन्नति चरम शिखर पर थी।
लेकिन यह सब रह यहीं गया,
उनकी काया तो नश्वर थी।

दशम सर्ग

जग मातु अहिल्या बाई ने,
जीवन में अतिशय कष्ट सहे।
सुख की आभा न कभी देखी,
उनके सपने मरु बीच रहे।

अपना पति-पुत्र श्वसुर खोकर,
हो गईं नितान्त अकेली वे।
तब अनगिन कठिन तनावों की,
जल धाराओं को झेलीं वे।

इस विषम परिस्थिति में पुत्री-
का, देख-देख मुँह जीती थीं।
उनके सुख की खातिर प्रतिपल,
अपने आँसू खुद पीती थीं।

पुत्री मुक्ता के नत्थू सा,
था एक पुत्र वह अभिमानी।
उसने माता की, नानी की,
आशाओं पर फेरा पानी।

वह मातु अहिल्या बाई की,
कोई भी बात न सुनता था।
अपने मन की करने वाला,
अपने सपनों को बुनता था।

पर वह उसको राज्याधिकार,
थीं प्रस्तुत गौरव देने को।
पर वह ऐसा बेरहम बना,
राजी न हुआ कुछ लेने को।

वह एक दिवस बीमार हुआ,
क्षय रोग वैद्य ने बतलाया।
काफी इलाज भी हुआ मगर,
पर लाभ न उसने कुछ पाया।

सन् सत्रह सौ सत्तासी में,
वह स्वर्गलोक को चला गया।
पत्नी-माता व पिता-नानी को,
दे करके दुख गया नया।

फिर सुत वियोग में पिताश्री,
यशवन्त राव की मृत्यु हुई।
यह समय सदा चलता रहता,
रुकती न समय की कभी सुई।

तब मुक्ता बाई पति के संग,
हो गईं सती ज्वालाओं में।
दोनों ही जलकर राख हुए,
था धुआँ प्रचण्ड दिशाओं में।

पुत्री जामाता चले गये,
रह गईं अकेली जीवन में।
यह मौत न देखे इस उस को,
भर चले सभी आलिंगन में।

इसने लीला सम्राटों को,
बलशाली का भी हनन किया।
यह ऐसी जीवन की भक्षक,
सम्पूर्ण जगत का दमन किया।

जब हुईं अहिल्या सत्तर की,
हो गईं क्षीण उनकी काया।
आया पिंचान्नबे सत्रह सौ,
तब छोड़ी इस जग की माया।

वह तिथि तेरह अगस्त वाली,
यह भूल न पायेगा भारत।
वह तीर नर्मदा और किला,
माहेश्वर रह न सका संयत।

चल बसीं अहिल्या बाई जब,
शत-शत आँखों ने नमन किया।
बह चलीं अश्रु की धारायें,
जब जग माता ने गमन किया।

यह समाचार सुन हतप्रभ थे,
राजा से लेकर रंक सभी।
हो गया व्यथित वह आसमान,
ज्यों फट गिर जायेगा वह भी।

उन जैसी नारी कभी-कभी,
इस जगती तल पर आती हैं।
जग को अपना वात्सल्य सौंप,
फिर पलक झपकते जाती हैं।

गुणवती कुल वधू बन करके,
अपने जीवन को धन्य किया।
कुछ ग्रहण जगत से कर न सकीं
लेकिन सबको अपनत्व दिया।

याचक की इच्छा पूर्ण करी,
दी शरण पूर्ण शरणागत को।
इन्दौर राज्य को सुख समृद्धि,
गौरव दिलवाया भारत को।

जैसे धरती पर गंगा माँ,
वैसे ही मातु अहिल्या थी।
वह शत्रु किसी की नहीं बनीं,
बन रहीं जगत संगी-साथी।

वह परम भक्त थीं शंकर की,
वह न्यायी धर्म परायण थीं।
उनमें थी गीता बसी हुई,
पावन पुस्तक रामायण थीं।

वे सदा नर्मदा संग रहीं,
यह साथ न छोड़ा जीवन भर।
देने को दान खुले रक्खे,
याचक के सम्मुख दोनों कर।

कवि मोरोपन्त मराठी ने,
माँ की प्रशस्ति में गीत लिखे।
इन्दौर महेश्वर की महिमा थी,
लिखे दृश्य जिस भाँति दिखे।

वे सन् सत्रह सौ नब्बे में,
निकले दक्षिण की यात्रा को।
देवी ने उनको मान दिया,
पूजा साहित्यिक प्रतिभा को।

एकादश सर्ग

देवी के पास राज्य वैभव, सुख-
सुविधाओं की कमी न थी।
पर जनता के हित की खातिर,
आँसू की धारा थमी न थी।

सूर्योदय होने से पहले कर,
स्नान आदि करके पूजन।
वह धार्मिक कृतियाँ पढ़ती थीं,
कर परम पिता का आराधन।

फिर दान सुपात्रों को देकर,
जन की पीड़ा को हरती थीं।
जब तृप्त सभी हो जाते थे,
तब अन्न ग्रहण वे करती थीं।

फिर दोपहरी से सायं तक,
वे राजसभा में रहती थीं।
सबकी बातों को जाँच-परख,
कर ही निज निर्णय कहती थीं।

संध्या आते दरबार त्याग कर,
पुनः ध्यान प्रभु का करती थीं।
तब भोजन करके राजसभा में,
पुनः चरण निज धरती थीं।

इस तरह रात्रि के ग्यारह तक,
निबटा शासन के काम-काज।
तब जातीं शयनागार बीच,
जब सो जाता सारा समाज।

वे मध्यम कद की महिला थीं,
उत्तम था उनका स्वास्थ्य बड़ा।
थीं श्याम वर्ण थे केश श्याम,
था माथे पर सौभाग्य जड़ा।

जो कोई मिलता था उनसे,
वह परम प्रभावित होता था।
सीधा-सादा जीवन उनका,
मन में श्रद्धा को बोता था।

साधारण परिवार में जन्मीं,
बनीं लोकमाता ऐसी।
बिरली ही नारियाँ जगत में,
देवि अहिल्या थीं जैसी।

विमल चरित्र कठिन था जीवन,
जन्मीं धर्म कार्य करने।
शंकर जी की परम भक्त थीं,
आयीं जग का दुख हरने।

परम गुणवती और कुलवधू,
दानशील अभिमान रहित।
ऐसी थीं माँ देवि अहिल्या,
कोमल अंतर हृदय सहित।

आज जबकि हर एक व्यक्ति,
निज के स्वार्थों में डूबा है।
कहीं न आशा शेष कोई-
है, जीवन से ही ऊबा है।

भाई से भाई रूठा है,
बेटे रूठे हैं माता से।
पिता निराशा में डूबा,
रूठा है भाग्य विधाता से।

माँ बेटी के बीच लकीरें,
भ्राता भगिनी तने तने।
बोझिल-बोझिल जीवन सबका,
पल-पल ही तोड़े दम सपने।

परिवारों में घोर विषमता,
पृथक-पृथक सबकी राहें।
प्रेम भरी बाँहें न कहीं,
हैं चढ़ी हुई सबकी बाँहें।

है समाज अस्तित्वहीन,
पग के नीचे है भूमि नहीं।
अंतस में कितने स्वार्थ भरे,
मिलते मानव अब नहीं कहीं।

सम्पूर्ण विश्व आतंकवाद-
की, छाया से आक्रान्त हुआ।
एक दूसरे के जीवन से,
खेल रहे हैं लोग जुआ।

ईश्वर ही यदि हमें उबारे,
तो शायद हम जी पायें।
पुण्य सलिल गंगा के जल को,
अमृत मान कर पी जायें।

ऐसे वातावरण बीच यदि,
देवि अहिल्या फिर आयें।
अपने स्नेह भरे हाथों से,
शायद जीवन दे जायें।

आज हमें फिर आवश्यकता,
पुण्य आत्मा माता की।
जो भारत को भारत कर दे,
ऐसी भाग्य विधाता की।

अरे अनागत शक्ति स्वरूपा,
देवि अहिल्या फिर आओ।
भारत माता की साँसों में,
अमृत स्नेह का बरसाओ।

यदि ऐसा हो जाये तो शायद,
हम सब संकट मुक्त दिखें।
फिर से हम प्राचीन समय की,
गाथा इस युग में भी लिखें।

फिर से हम लोकोपकार की,
भावनाओं से जुड़ जायें।
फिर से हम सब सृजन में रत हो
उसके पथ को मुड़ जायें।

यदि ऐसा हो गया तो जीवन,
की सार्थकता भी होगी।
यदि ऐसा हो गया तो मन से,
रह न सकेंगे हम रोगी।

यदि ऐसा हो गया तो सूनी,
बगिया में गुंजन होगा।
यदि ऐसा हो गया तो जग में,
निश्चित परिवर्तन होगा।

साहित्य शिरोमणि डॉ. अजय प्रसून : एक परिचय

अनागत कविता आंदोलन के प्रवर्तक साहित्य शिरोमणि श्रद्धेय डॉ. अजय प्रसून जी किसी परिचय के मोहताज़ नहीं हैं। साहित्य जगत के मार्तण्ड डॉ. प्रसून जी का जन्म 18 जनवरी 1954 को स्व. श्री सरोज कुमार द्विवेदी व स्व. श्रीमती कांति द्विवेदी जी के यहाँ हुआ था। कुलीन परिवार में जन्मे प्रसून जी ने हिंदी विषय से परास्नातक तक की शिक्षा के साथ बी.एम.एस. (होम्योपैथिक चिकित्सा) का डिप्लोमा कोर्स भी किया। तत्पश्चात प्रशिक्षण एवं सेवायोजन निदेशालय, लखनऊ में प्रशासनिक अधिकारी के रूप में कार्य करते हुए साहित्य के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई। आपके द्वारा अनागत कविता आंदोलन की पृष्ठभूमि तैयार की गई थी जो आज तक सतत् चलती आ रही है और नित नए कीर्तिमान गढ़ रही है।

डॉ. अजय प्रसून से कविता की कोई विधा अछूती नहीं है। आप गीत, ग़ज़ल, दोहा, मुक्तक, बाल कविता व छंदबद्ध काव्य में पूर्ण पारंगत हैं। साहित्य जगत को आपने अपनी कृतियों युग के आंसू (खण्डकाव्य), बच्चों की प्यारी कविताएं, गाओ गीत सुनाओ गीत, बच्चों शिष्टाचार न भूलो, बच्चे गायें गीत, तितली के पंखों सी भोर आदि बाल कविता संग्रह, महानगर के बीच (हिंदी ग़ज़ल संग्रह), कम नहीं बोलेंगी ग़ज़लें, बाँसुरी की भीतरी तह में (अनागत काव्य संग्रह), दर्पण शिलालेख हो जाए (अनागत गीत संग्रह), आंसुओं का बयान जारी है (अनागत ग़ज़ल संग्रह), काजलयी हम प्यास लिये, हो जाए मन बुद्ध (अनागत मुक्तक संग्रह) आदि के माध्यम से ज्ञान की जो गंगा बहाई, इसके लिए आपको साहित्य गंगा का भगीरथ कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। साहित्य जगत को अमूल्य योगदान देने के फलस्वरूप भारतवर्ष की अनेकों संस्थाओं द्वारा समय-समय पर सम्मानित किया जाता रहा है जिसमें गाओ गीत सुनाओ गीत पुस्तक पर उ.प्र. हिंदी संस्थान द्वारा 1981 में अनुशंसा पुरस्कार, 2022 में राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी बाल कविता सम्मान तथा उ.प्र. राज्य कर्मचारी साहित्य संस्थान लखनऊ द्वारा साहित्य गौरव सम्मान तथा कृति पर एक लाख रुपये का नकद पुरस्कार मुख्य हैं। आपको आकाशवाणी व दूरदर्शन लखनऊ द्वारा संगीतबद्ध गीतों हेतु मान्यता प्राप्त गीतकार की मान्यता प्राप्त हुई है। एच.एम.वी. सारेगामा द्वारा आपके गीतों की कैसेट जारी की जा चुकी है। आपके कविता आंदोलन की धमक विश्वविद्यालयों के शोध ग्रंथों में चर्चा से पता चलती है।

आपके द्वारा 72 वर्ष की आयु में प्रवेश के साथ-साथ आपकी संस्था अ.भा. अनागत साहित्य संस्थान ने इस वर्ष 50 वर्ष पूर्ण कर स्वर्ण जयंती मनाई जिसमें अनेकों साहित्य मनीषियों को अनागत स्वर्ण जयंती सम्मान से सम्मानित कर साहित्यकारों में नई ऊर्जा व प्रोत्साहन देने का कार्य प्रत्येक माह होने वाली मासिक काव्य गोष्ठी व एक कवि को अनागत मार्तण्ड सम्मान व एक कवयित्री को अनागत चन्द्रिका सम्मान से सम्मानित किया जाना है।

डॉ. अनिल कुमार सिंह जैसवार 'पं. बेअदब लखनवी'

महामंत्री, अ.भा. अनागत साहित्य संस्थान, लखनऊ

आकल्प प्रकाशन

Aakalp Prakashan
615/128, Preeti Nagar, Sitapur Road,
Lucknow-226021 Mob.: 9839746476
E-mail: aakalpprakashan@gmail.com

9 788198 129864

₹ 150.00